Review Of Research
Vol. 3 | Issue. 9 | June. 2014
Impact Factor : 2.1002 (UIF)
ISSN:-2249-894X
Available online at www.ror.isrj.net

ORIGINAL ARTICLE

"मालती जोशी के उपन्यासों में चित्रित माता का रूप"

गोकुलदास सोनु ठाकरे

गजमल तुलशीराम पाटील , महाविद्यालय, नंदुरबार, ता.जि. नंदुरबार

***सारांश** :-*

साठोत्तरी महिला लेखिकाओं में मालती जोशी का संवेदनशील महिला कथाकार के रूप में उल्लेखनीय स्थान है। उन्होंने उपन्यास साहित्य के माध्यम से अपनी निजी अनुभूतियों को यथार्थ रूप में अभिव्यक्त किया है। अपनी संवेदना और दूरदर्शिता के कारण नारी को सजग और सचेत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। इनके उपन्यासों का सृजन शहरी मध्यवर्गीय नारी को केंद्र में रखकर हुआ है। मालती जोशी स्वयं नारी होने के कारण उन्हें नारी के प्रति गहरी सहानुभूति है। उन्होंने अपने उपन्यासों में नारी मन के सूक्ष्म पर्तों को खोलने का साहस किया है।

प्रस्तावना :-

मालती जोशी के कथा साहित्य की आधुनिक पढी-लिखी नारी पुरुष प्रधान समाज व्यवस्था में अपने अस्तित्व की खोज में लगी है। एक ओर वह कर्तव्यनिष्ठ और दृढता से परिवार के प्रति अपने दायित्व को निभा रही है तो दूसरी ओर परिवार के सदस्य उनके त्याग और समर्पण को नजरअंदाज करते हैं। इनके कथा साहित्य की नारी आशावादी है। वह किसी भी विषम परिस्थिति से निराश या हताश नहीं है। उन्होंने नारी को वात्सल्य, प्रेम, स्नेह, ममता, दया, क्षमा, सेवा, त्याग और बलिदान की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित है। नारी के प्रति सहानुभूति आपके कथा साहित्य में अभिव्यक्ति हुई है। वर्तमान समय में कामकाजी नारी दोहरे पाटों में पिस रही है। वह घर और बाहर दोनों जगह संघर्ष करती है। इसलिए ऐसी नारियों के प्रति आपने सहानुभूति व्यक्त की है। दहेज के अभाव में जिन किशोरियों के विवाह नहीं हो पाए उनके प्रति भी गहरी संवेदना व्यक्त की है। वह कहानीकार, उपन्यासकार, बालकथाकार, संगीत तज्ञ, गीतकार एवं व्यंग्यकार के रूप में उभरकर आती है। इस दृष्टि से मालती जोशी का व्यक्तित्व बहुआयामी है।

साहित्य और नारी का सम्बन्ध प्राचीन काल से रहा हैं। उसे प्राचीन काल से ही साहित्य में स्थान मिला है। नर और नारी समाज के अभिन्न अंग है, एक के अभाव में दूसरे का विकास संभव नहीं है। अधिकांश विचारकों ने नारी को समाज के लिए अधिक महत्वपूर्ण स्वीकार किया है। वैदिक युग से लेकर आधुनिक युग तक नारी की स्थिति में काफी परिवर्तन हुआ है। प्राचीन काल में नारी की स्थिति काफी उन्नत थी। उसे पुरूषों के समान ही अधिकार प्राप्त थे। वे स्वयं स्वयंवर द्‌वारा अपने पति का चुनाव कर सकती थी। दहेज प्रथा भी न थी और न ही बाल विवाह का-सा घोर अत्याचार था। पत्नी पति की अर्धांगिनी कही जाती

थी। नारी का यह स्वर्णयुग अधिक समय तक नहीं टिक पाया। उसकी स्थिति दिन-ब-दिन दयनीय होती गयी।

आधुनिक युग में नारी की दयनीय स्थिति में काफी सुधार आ गया है। इसका श्रेय राजा राम मोहनराय, श्री कर्वे, दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण परमहंस, महात्मा फुले तथा महात्मा गांधी आदि को दिया जा सकता है। इनके प्रयत्नों से आधुनिक युग के साहित्यकारों के विचारों में भी परिवर्तन हुए। आधुनिक साहित्यकारों का नारी विषयक दृष्टिकोण भावात्मक बन गया। आज नारी के प्रति दृष्टिकोण सर्वथा बदल गया है। नारी के दबाएँ हुए व्यक्तित्व को पुनर्स्थापित करने का प्रयत्न होने लगा है। स्वयं नारी को इस कार्य के लिए सक्रिय होना पडा है। बदले हुए दृष्टिकोण ने नारी को नये रूप में देखा है। उसकी सराहना की, उसके प्रति अपनी श्रध्दा अर्पित की। नव दृष्टिकोण अपनाने वालों ने देखा कि नारी मात्र भोग की वस्तु नहीं बल्कि श्रध्देय भी है।

प्रकृति की ओर से नर-नारी की शारीरिक-बनावट एवं क्रियाओं में भिन्नता है उसी प्रकार मानव द्वारा निर्मिती संस्कृति एवं सभ्यता में भी नर-नारी सम्बन्धी धारणाओं, कार्यों एवं मानसिकता में भिन्नता है। मानव-निर्मित समाज में आज मानव प्रयास द्वारा नर-नारी के बाह्य अन्तर को समाप्त किया गया है। विश्व में साम्यवादी देशों की इसमें महत्वपूर्ण भूमिका रही है। भारतीय समाज में यह स्थिति अभी नहीं आयी है। उसमें प्रकृति-प्रदत्त नियम एवं मानव-समाज के नियम के कारण नर-नारी में भिन्नता है। भारतीय समाज के विकास का अपना एक पृथक अस्तित्व है और इतिहास भी, जिसके परिप्रेक्ष्य में ही नारी विमर्श के विविध रूपों का विश्लेषण किया जा सकता है।

मालती जोशी ने नारी को शक्तिशालीनी के रूप में अभिव्यक्त किया है। उनके विचार है कि, "पुरुष जब भीतर से टूटने लगता है, तो नारी का सहज स्नेह ही उसे सम्बल दे पाता है। इसी स्त्रोत से वह शक्ति ग्रहण करता है। नारी चाहे वह माँ हो, पत्नी हो, बहन हो, मित्र हो....।"[१]

मालती जोशी ने नारी को दो रूपों में अभिव्यक्त किया है, एक उसका सार्वजनिक रूप है जिसमें कार्यक्षेत्र के अनुसार वह अपनी अलग पहचान बनाकर पारिवारिक, आर्थिक सहायक के रूप में दृष्टिगोचर होती है। दूसरा उसका रूप वैयक्तिक है जिसके अनुसार परिवार में उसे एक आदर्श भारतीय नारी की भूमिका निभानी पडती है। नारी वर्ग की इस दोहरी भूमिका को मालती जोशी ने बडे ही यथार्थ ढंग से चित्रित किया है।

मालती जोशी ने नारी के विभिन्न रूप चित्रित किए हैं। इन रूपों के माध्यम से उन्होंने नारी जीवन के अनेक पहलुओं को उजागर ही नहीं किया, बल्कि आधुनिक मूल्यों और मान्यताओं की कसौटी पर उन्हें जाँचा एवं परखा भी है। उन्होंने अपने नारी पात्रों के माध्यम से नारी की अस्मिता, स्वाभिमान, आत्माभिमान, स्वावलम्बन तथा सबलीकरण को प्रस्तुत किया है। नारी चरित्रों के विविध रूप कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण हैं।

नारी के विविध रूपों में सबसे अधिक महान, आदर्शवादी और गौरवशाली रूप माता का है। वेदों में माता को पृथ्वी-स्वरूपा कहा गया है। पृथ्वी के समान ही वह संतान को धारण करती है, उसका लालन-पालन करती है और आजीवन धैर्य एवं सहिष्णुता के साथ संतान के सुख की कामना करती है। माता के ऋण से कोई मुक्त नहीं हो सकता। मातृत्व नारी जीवन की चरम सफलता है। माता के स्वभाव में धैर्य, त्याग, ममता, स्नेह का भंडार होता है। संतान को जन्म देना, उसका लालन-पालन करना, अन्तिम क्षण तक उसकी रक्षा करना और आजीवन उसकी उन्नति में योग देना मातृत्व का यही आदर्श और शाश्वत रूप है। माँ की महत्ता के बारे में डॉ. सुलोचना नरसिंगराव अंतरेड्डी लिखती है - ''मातृत्व संसार की सबसे बडी साधना, सबसे बडा त्याग और सबसे बडी विजय है।''[२] माँ में ममता या वात्सल्य की भावना, सहज , स्वाभाविक और प्राकृतिक होती है। वह ममता की भावना से अलग नहीं हो सकती। वात्सल्य का भाव नारी का प्राकृतिक गुण है। उसे उसके व्यक्तित्व से अलग नहीं किया जा सकता। इसलिए नारी ममता की प्रबल अनुभूति को जिस तीव्रता के साथ अनुभव करती है उतनी तीव्रता के साथ पुरूष नहीं। पुरूष नारी के ममतामयी रूप को देख सकता है ठीक उसी रूप में अनुभव नहीं कर सकता। माँ का प्यार अपने सभी बेटे-बेटियों के साथ रहता है।

मरण प्राय वेदनाएँ सहकर नारी शिशु को जन्म देती है, उसे सुसंस्कारित बनाती है। पाल-पोसकर बढाती है। माँ को वात्सल्य, ममता, स्नेह, सेवा आदि भावों में देखा गया है। बालक के लिए माँ के समान गुरू और रक्षक दूसरा कोई नहीं है। इसलिए माँ संसार में सदैव श्रध्दा की पात्र रही है। डॉ. सौ. जे. एम. देसाई नारी के मातृत्व के बारे में लिखती हैं कि - ''मरणप्राय वेदनाएँ सहकर शिशु को जन्म देने वाली माता अपने बच्चे के रूप में मानों चारों धाम पाती है।''[३] स्पष्ट है कि मातृत्व संसार की सबसे बडी साधना, सबसे बडा त्याग और सबसे महान विजय है।

नारी आजीवन धैर्य एवं साहस के साथ संतान के सुख की कामना करती रहती है। वह दुनियाँ की हर मुसिबतों का सामना करती हुई अपने बच्चों पर उसकी आँच तक आने नहीं देती। डॉ. विजय घुगे लिखते हैं - "बालक के लिए माँ के समान गुरु और रक्षक दूसरा कोई नहीं होता। इसलिए माँ संसार में सदैव श्रद्धा की पात्र रही है।"[४] माता के हृदय में धैर्य, त्याग, ममता, स्नेह, प्रेम, सहानुभूति, सेवा और दया का भंडार होता है। संतान को जन्म देना, उसकी परवरिश करना और जब तक अपने शरीर में जान है तब तक उसकी हिफाजत करना तथा उसकी कामयाबी में साथ देना ही माता का आदर्श और शाश्वत रूप है। माता के हृदय में वात्सल्य की भावना सहज, स्वाभाविक और प्राकृतिक होती है। पिता की अपेक्षा माता अधिक कोमल होती है। यह कोमलता उसमें प्रकृति प्रदत्त होती है।

माता अपने बच्चों को परम्परागत संस्कार देती है जो बरसों से चले आ रहे हैं। परिवार में उसे जो संस्कार मिले हैं वहीं बच्चों को सिखाती है। वह स्वयं परम्परा की लीक पर चलती है और बच्चों को भी वही लीक पर चलने के लिए आग्रह करती है। परम्परागत माता की सोच होती है कि बेटे को घर के बाहर के कामों की जानकारी दी जाए और बेटी को चुल्हे-चौके की जिम्मेदारियों से अवगत कराया जाए। क्योंकि परम्परागत सोच तो यही है कि पुरुष कमा कर लाए और नारी घर-गृहस्थी को सँभाले। परम्परागत माता अपनी बेटी को घर के सभी कामों की जिम्मेदारियाँ सीखाती है। वह चाहती है कि ससुराल में उसे किसी काम में दिक्कत न आये। खाना बनाना, झाडना-बूहारना, बर्तन माँझना, चाय-नाश्ता बनाना, कपडे धोना, सिलाई-बुनाई आदि सभी कामों की वह अभस्त हो। परम्परागत माता को बेटी की पढाई-लिखाई में कोई दिलचस्पी नहीं होती। क्योंकि वह सोचती है कि बेटी पढ-लिखकर क्या करेगी। उसे तो एक दिन ससुराल ही जाना है, इसलिए वहाँ पढाई-लिखाई कुछ काम की नहीं है, बल्कि घर के कामों में अधिक अभस्त है तो उसका जीवन सुखद बन जाएगा।

'राग-विराग' की कल्याणी की माँ परम्परागत माता है। इसलिए तो वह बेटी को संगीत की अपेक्षा घर के कामों की ओर ध्यान देने के लिए कहती है। कल्याणी की माँ कहती है - "कनु थोडा इधर भी देख लिया करो। कल को ससुराल जाओगी तो यही काम आयेगा। यह हिन्दुस्तान है, अमरीका नहीं है।"[५]

'निष्कासन' उपन्यास की माया की माँ परम्परागत माता के रूप में चित्रित है। वह माया को समझाती है कि उसकी बेटी को साडी या सलवार पहनाया करे। वह कहती है - "लडकी तो बाप की तरह लम्बोतरी हुई जा रही है। इसे साडी या सलवार पहनाया कर। ये उघडी-उघडी टाँगे अच्छी नहीं लगती।"[६] परिवार में बेटे का जन्म होने पर खुशियों का ठीकाना नहीं रहता। माता को अपना बेटा किसी राजकुमार से कम नहीं लगता है। उसका रुप-रंग का वर्णन होने लगता है। बच्चा पालने में ही होता है, तब से माता सपने देखने लगती है कि, बच्चें को इंजिनियर बनाए, डॉक्टर बनाए या कलेक्टर बनाए। वर्तमान समय में तो मास्टर और बाबू की तो कोई हैसियत ही नहीं रही। उनकी तो अवहेलना ही की जाती है। 'राग-विराग' उपन्यास में मनोज की माँ कहती है - "कैसा राजा का-सा रुप लेकर जन्मा है। इसे बाबू या मास्टर मत बनाना। ये तो कलेक्टर बनेगा, कलेक्टर।"[७]

'सहचारिणी' की नीलम ने बच्चें को जन्म दिया तो वह अपनी खुशी का इजहार नहीं कर सकती। नारी संतान को जन्म देकर अपने जीवन की सार्थकता को पाती है। वह मरणोपरान्त पीडा सहकर संतान को जन्म देती है, तो उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहता। बच्चे को जन्म देकर मानो नारी चारों धाम का पुण्य प्राप्त कर लेती है। नीलम कहती है - "रवि को जब पहली बार छाती से लगाया, तो कुछ देर तक मुझे

विश्वास ही नहीं हुआ कि यह सब कुछ सच में घटित हो रहा है। मृत्यु-भय से इतनी ग्रसित थी मैं कि अचरज का पहला दौर समाप्त होते ही मैं आनन्दसागर में डूब गयी।"[८]

'राग-विराग' उपन्यास में मनोज की माता परम्परागत माता के रूप में चित्रित है। मनोज की माता अपने बेटे के लिए गोरी चिट्टी, सुन्दर बहू घर लाना चाहती थी। परन्तु मनोज ने कल्याणी के साथ प्रेम विवाह कर लिया। कल्याणी काले रंग की एक साधारण लडकी है। वह रूप-रंग से साधारण लडकी है। परिणामस्वरुप मनोज की माता बात-बात पर कल्याणी की अवहेलना करती है। वह कल्याणी का अपमान करती है और कल्याणी पर ताने मारती रहती है। मनोज की माता हमेशा प्रेम विवाह पर ताने मारती रहती है। वह कहती है - "अच्छी लव मैंरेज की है। थके हारे मर्द को एक कप चाय का भी आसरा नहीं है। मैं कहती हूँ, सूरत शक्ल तो भगवान की देन है पर आदमी गुण-ढंग तो सीख सकता है।"[९] वह पोती को अत्यधिक चाहती है क्योंकि वह गोरी चिट्टी है। इस बात पर भी बार-बार ताने मारती हुई कल्याणी को कोसती हुई कहती है - "गनीमत है कि माँ पर नहीं गयी, नहीं तो हाथ लगाने का भी मन नहीं होता।"[१०]

'राग-विराग' की कल्याणी एक आदर्श माता के रुप में चित्रित है। वह एक कामकाजी नारी है। दिनभर दफ्तर में रहती है लेकिन उसका मन वहाँ नहीं लगता। हर पल वह अपनी बेटी के बारे में चिंतीत-आशंकित रहती है। पाँच-छह घंटों का विरह उसे पहाड जैसा महसूस होता है। घर पहुँचते ही बेटी श्वेता को गोद में लेकर बडे लाड-प्यार से दुलारती है। कल्याणी कहती है - "दिन भर ऑफिस के काम करते हुए मन अपनी लाडली के आसपास घूमा करता। उसके किसी प्रकार के अहित की आशंका मुझे नहीं थी फिर भी वह पाँच-छह घंटों का बिछोह मेरे लिए पहाड बन जाता। घर लौटने तक ममता का भार असह्य हो उठता। लगता की उडकर पहुँच जाऊँ और उसे छाती से लगा लूँ।"[११] कल्याणी में वात्सल्यमय की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है। बेटी से दिनभर का विरह उसे असह्य हो जाता है।

'सहचारिणी' की नीलम एक आदर्श माता के रुप में चित्रित है। नीलम माता बननेवाली है। वह बच्चे के जन्म के पहले ही योगेश की पहली पत्नी की बेटी रेणू को घर लाना चाहती है। वह सोचती है कि इस समय अगर मैं रेणू को घर नहीं लाऊँगी तो शायद उसे कभी भी स्वीकार नहीं कर पाऊँगी। नारी चाहे कितनी भी आदर्शवादी क्यों न रहे फिर भी अपने संतान के प्रति उसका रुझान अधिक ही रहता है। नीलम कहती है - "इस समय अगर चूक गयी, तो फिर कभी भी उसे बुला नहीं सकूँगी। अपने बच्चे के जन्म के बाद भी मेरा मन ऐसा ही रह जाएगा, इसका खुद मुझे भी विश्वास न था।"[१२]

'सहचारिणी' की मिसेज सुलाखे कामकाजी नारी है। वह दफ्तर में जाते समय अपना छह माह का दुध मुहां बच्चा सास के पास छोडकर जाती है। वह बच्चे से इतना अधिक प्यार करती है कि कई बार घर से निकलते समय रो पडती है। उसका मातृ ह्रदय उसे घर से बाहर निकलने की अनुमती नहीं देता। वह भावना विवश हो जाती है और वात्सल्य प्रेम के कारण अपने आँसूओं को रोक नहीं पाती। 'सहचारिणी' की नीलम कहती है कि - "मिसेज सुलाखे सीधी घर गयी होंगी। घर पर उसका छह महिने का बच्चा है। पहला-पहला बच्चा है। उसे रोज सास के पास छोडकर आते हुए कई बार वह खुद रो देती है।"[१३]

'ऋणानुबंध' की मंदा भी वात्सल्यमय रुप में चित्रित है। वह भी अपनी संतान के लिए अपने सुख का आजीवन त्याग कर देती है। अपने मालिक से प्राप्त विकलांग बच्चे से वात्सल्यमय प्रेम की वजह से वह कई वर्ष उनके घर बिताती है। मालिक के बच्चों की देखभाल करती है। विकलांग चेतना शून्य पुत्र के लिए माता का वात्सल्य प्रेम और त्याग ह्रदयस्पर्शी है। पुत्र के मर जाने के पश्चात् उसके विलाप से उसका आक्रोश प्रकट होता है। वह कहती है - "मेरा बच्चा वहाँ अस्पताल में तडपता रहा और मैं यहाँ पराए बच्चों के लिए खाना बनाती रही, कपडे सीती रही, स्वेटर बुनती रही। सुबह से शाम तक खटती रही।"[१४]

'निष्कासन' की माया अपनी बेटी को पिता का अभाव अनुभव नहीं होने देती और उसकी ओर पूरा ध्यान देती है। वह पिता और माता दोनों की भूमिका बडी सहजता से निभाती है। माता-पिता के लिए बच्चे कितने भी बडे हो जाए किन्तु वे बच्चें ही होते हैं। मिसेज कोहली जब भी स्कूल की लडकियों को फ्राक या स्कर्ट-ब्लाऊज में देखती है तो उसे अपनी गुडिया की याद आ जाती है और उसकी आँखें भर आती है। मि.

कोहली कहता है - "इन पन्द्रह दिनों में मैंने यह बात कई बार मार्क की है। फ्रॉक या स्कर्ट-ब्लाउज वाली किसी लडकी को देखते ही तुम्हारी आँखें पीडा से भर उठती है। क्या तुम्हारी कल्पना में वह अब भी छोटी-सी बच्ची ही है ? मैंने भी उसे देखा है वह एक सुन्दर युवती है ... मनोहर और माँसल। तुम पता नहीं क्यों उसे अब तक नन्ही-मुन्नी गुडिया ही समझती रही हो। शायद माँ की नजरों में बच्चा कभी बडा होता ही नहीं।"[१५]

'सहचारिणी' की नीलम की अम्मा का वात्सल्य प्रेम अनुठा है। अम्मा नीलम के वैवाहिक जीवन में कलह-तनाव का वातावरण निर्माण होने नहीं देना चाहती। वह हमेशा नीलम को समझौते का मार्ग बतलाती है। वह नीलम को पति से लडने-झगडने की अपेक्षा संघर्ष से बचना सीखाती है। वह कहती है कि मनुष्य से अनजाने में कोई छोटी-मोटी गलती हो ही जाती है, उसे हम अनदेखा कर सकते हैं। नीलम पति योगेश की शिकायत करती है कि अब वे शराब पीने लगे है। अम्मा नीलम को समझाती हुई कहती है कि - "कमाऊँ मर्द है, इतने दिनों तक घर से बाहर-बाहर रहा है। छोटी-मोटी आदतें कुछ पड भी गयी हों, तो उनका इतना हौआ नहीं बनाया करते। कुछ सब्र से काम लेना सीखो। बेकार घर में कलह करने के क्या फायदा।"[१६]

'चाँद अमावस का' में बुआजी भी वात्सल्य की प्रतिमूर्ति है। वह बच्चों की खुशी में ही अपनी खुशी मानती है। वह सोचती है कि आखिर आदमी किसके लिए काम करता है, किसके लिए पैसे संचय करता है, अपने बच्चों के लिए ही तो हम सब कुछ करते हैं। बुआजी कहती है - "बिटिया, धरम-करम आदमी करता ही किसलिए है ? मेरा तो अब लोक भी वही है, परलोक भी वही है। सन्तान का सुख ही तो सबकुछ होता है।"[१७]

'विश्वासगाथा' की भाभी एक माता का वात्सल्यमय रूप का सुन्दर उदाहरण है। संसार में हम देखते हैं कि चोट बच्चें को लगती है और पीडा माता को होती है। भाभी की स्थिति भी वैसी ही है। उसका बच्चा पलंग से गिर जाता है तो उसके मन में तरह-तरह के विचार उठने लगते हैं और वह काँप जाती है। वह कहती है - "सच, अकेली संतान के साथ छोटी-सी बात भी कितनी बडी होकर सामने आती है। किसी के बच्चे क्या कभी गिरते नहीं ? क्या उन्हें चोट नहीं आती ? पर मेरा तो मन ही और मिट्टा का बना है। ऊटपटाँग-सी कल्पनाएँ करके खुद को ही यंत्रणा देती रहती हूँ।"[१८]

सौतेली माता का रुप बदनाम है। वह सौतेले बच्चों के प्रति कितना भी उदारता से व्यवहार करे तो भी आज उसे संदेह की दृष्टि से ही देखा जाता है। संसार में सौतेली माता का व्यवहार सौतेले बच्चों के प्रति अति कठोर, कटू, निर्दयी, निर्ममतापूर्ण रहा है। इसलिए वर्तमान समय में सौतेली माता का व्यवहार भले ही स्नेह, ममता और सद्‌भाव पूर्ण हो फिर भी समाज उसके व्यवहार को संशय की दृष्टि से ही देखता है। किंतु मालती जोशी ने अपने उपन्यासों में सौतेली माता को आदर्श रूप में चित्रित किया है।

'पाषाण-युग' की नीरु (नीरजा) अपने सौतेले बच्चों के प्रति बडी सचेत है। किसी को शिकायत का मौका नहीं देती। बच्चों की रुचि-अरुचि का बडा ध्यान रखती है। उनके साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार करती है। परन्तु शकुन बदले में सौतेली माता नीरु को 'थैंक्यू' शब्द के अलावा कूछ भी प्रतिदान नहीं दे पाती है। बकुल कहती है - "दिन-भर वे किचन में व्यस्त रहती, क्योंकि घर पर दिन-भर लगों का आना-जाना लगा रहता था। इस आपाधापी के बीच भी उन्होंने दीदी के लिए एक शाल काढा था, एक कार्डिगन बुना था। प्यारी-सी दो साडियाँ भी वे दीदी के लिए लायी थी, पर एक छोटी-सी 'थैंक्यू' के अतिरिक्त दीदी ने उसका कोई प्रतिदान नहीं दिया था।"[१९]

'सहचारिणी' की नीलम आदर्श सौतेली माता के रूप में चित्रित है। आम धारणा है कि सौतेली माता का सौतेले बच्चों के प्रति कटू व्यवहार होता है। जिस घर में सौतेली माता होती है उस परिवार के बच्चें होस्टल में भेज दिए जाते हैं। नीलम रेणू की सौतेली माता हैं, किन्तु नीलम का रेणू के प्रति व्यवहार बडा सद्‌भाव पूर्ण रहा है। नीलम रेणू को होस्टल में भेजना नहीं चाहती। निलम ने परम्परागत रुप से आ रही सौतेली माता के धारणा को बदल दिया है। उसने सौतेली माता के बदनाम रुप को आदर्श में परिवर्तित कर दिया है। नीलम कहती है - "क्या सचमुच योगेश उसे होस्टल भेज देंगे। तब, सब लोग यहीं न सोचेंगे कि

अपना बच्चा आते सारे आदर्श हवा हो गये।"[२०] नीलम ने एक बच्चे को जन्म दिया। नीलम के सामने एक समस्या है कि घर में अब दो बच्चों को कैसे संभाल पाएगी। जाने अनजाने में अगर कोई गलती होती है, तो पडोसी नीलम को बुरा कहेंगे साथ में योगेश भी। नीलम की माता कहती है - "दोनों को एकदम संभाल नहीं पायेगी। जरा भी भूल-चूक होगी, तो पडोसी तो कहेंगे ही, योगेश भी कहने से नहीं चूकेगा। सौतेली माँ का नाम ही बुरा होता है।"[२१]

वर्तमान युग में माता का स्वार्थ केन्द्रित रूप भी मिलता है। ऐसी माता अपने बच्चों के भविष्य, सुख-दुःख की अपेक्षा अपने ही स्वार्थ में अंधी होती है। उसे अपने सुख-दुःख की अधिक चिंता होती है। 'ज्वालामुखी के गर्भ में' की मनिष की माता पति की मृत्यु के बाद अपनी जिम्मेदारियां भूल जाती है। वह माता का दायित्व तथा अपना कर्तव्य ठीक से नहीं निभाती। अपनी छोटी बहन पर बच्चों का दायित्व सौंप कर निचिंत हो जाती है। माता के होते हुए बच्चें माता के वात्सल्य प्रेम से वंचित हो जाते हैं। इस बात को बच्चें सह नहीं पाते। उन्हें हर चिज मौसी से मांगनी पडती है। परिणामस्वरुप माता के प्रति बच्चों के मन में घृणा निर्माण होती है। वे माता का तिरस्कार करने लगते हैं। मनिष कहता है - "चाहिए तो था कि माँ अपनी ममता का आँचल कुछ और फैलाकर पापा का भी स्थान ले लेती, पर वे तो माँ भी नहीं रह पायी। इस पराये देश में पराये घर में पराये हाथों में हमें छोडकर निश्चिंत हो गयी। 'पराया' शब्द शायद तुम्हें ठीक न लगे। मीता मौसी लाख उनकी बहन थी, पर हम उन्हें कितना जानते थे।"[२२]

'चाँद अमावस का' की सुनीता लालची, अत्याचारी और अपना हित चाहनेवाली माता है। पति की मृत्यु के बाद सुनीता के मन में ग्रंथी निर्माण हो जाती है। सुनीता जब गर्भवती होती है तब उसके पति की मृत्यु हो जाती है। इसका प्रतिकूल प्रभाव सुनीता के मन पर पडता है और वह गर्भ स्थित शिशु से ही घृणा करने लगती है। वह बच्चें को अपने लिए अशुभ मानती है। इसलिए बच्चें से नफरत करने लगती है। सुनीता कहती है - "कमबख्त एक बोझ है जिन्दगी पर न जीने देता है, न मरने देता है।"[२३] सुनीता बच्चे को जन्म देती है। माता बनने के बाद भी उसकी ममता पुत्र के प्रति जागती नहीं। वह सूख जाती है। सुनीता की भाभी बच्चें को सुनीता की गोद में डालकर उसका मातृत्व जगाना चाहती है। उसमें वात्सल्य की भावना निर्माण करना चाहती है लेकिन सुनीता को बच्चें से इतनी घृणा है कि वह बच्चें को फेंकने के लिए कहती है। सुनीता अपनी भाभी से कहती है - "फेकों इसे उधर ! उसने चीखकर कहा और सचमुच परे धकेल दिया। जरा सी भी असावधान होती तो सर्वनाश निश्चित था।"[२४] सुनीता के लिए अपना बच्चा एक मुसिबत लगता है। वह बच्चें को अनाथालय में भेजकर उससे मुक्ति पाना चाहती है। सुनीता भाभी से कहती है - "इस अलामत को क्यों पाल रखा है भाभी तुमने ? किसी अनाथालय में भेज दो न।"[२५]

मालती जोशी ने अपने उपन्यासों में माता के विभिन्न रूपों का यथार्थ चित्रण किया है। इनके उपन्यासों की परम्परागत माता अपनी संतान को परम्परागत संस्कार देती है जो बरसों से चले आ रहे हैं। परिवार में उसे जो संस्कार मिले हैं वहीं संतान को सिखाती है। वह स्वयं परम्परा की लीक पर चलती है और बच्चों को भी वही लीक पर चलने के लिए अनुरोध करती है। मालती जोशी के उपन्यास की परम्परागत माता अपने बेटे को बाहर के कामों की जानकारी देती है तथा बेटी की चुल्हे-चौके की जिम्मेदारियों से अवगत कराती है। उसकी सोच है कि बेटी पढ-लिखकर क्या करेगी। उसे तो एक दिन ससुराल ही जाना है। इनके उपन्यासों की नारी अपने जीवन की सार्थकता माँ बनने में ही स्वीकार करती है। उन्होंने माता का वात्सल्यमय रूप की सराहना की है तथा स्वार्थ केंद्रित माता का रूप की निंदा की है। मालती जोशी ने परम्परागत सौतेली माता का बदनाम रूप को आदर्श रूप में चित्रित किया है। इनके उपन्यासों की माता के हृदय में धैर्य, त्याग, ममता, स्नेह, प्रेम, दया, सेवा, क्षमा और सहानुभूति का भंडार है।

संदर्भ ग्रंथ -

१. मालती जोशी - पाषाण युग, पृ.क्र.१०३

२. डॉ.सुलोचना नरसिंगराव अंतरेड्डी - कृष्णा सोबती के उपन्यासों में प्रतिबिंबित नारी जीवन, पृ.क्र. ६७
३. डॉ.सौ. जे.एम. देसाई - हिंदी काव्य और नारी, पृ.क्र. १३
४. डॉ.विजय घुगे - कहानीकार मालती जोशी, पृ.क्र. ५४
५. मालती जोशी - राग-विराग, पृ.क्र. ३८
६. मालती जोशी - पाषाण युग, पृ.क्र. ५८
७. मालती जोशी - राग-विराग, पृ.क्र. ४४
८. मालती जोशी - सहचारिणी, पृ.क्र. ३२
९. मालती जोशी - राग-विराग, पृ.क्र. ३६
१०. वही - पृ.क्र.३४
११. मालती जोशी - राग-विराग, पृ.क्र. ३६
१२. मालती जोशी - सहचारिणी, पृ.क्र. २८
१३. वही - पृ.क्र.१२
१४. मालती जोशी - समर्पण का सुख, पृ.क्र. ६८
१५. मालती जोशी - पाषाण युग, पृ.क्र. ५३
१६. मालती जोशी - सहचारिणी, पृ.क्र. ४४
१७. मालती जोशी - समर्पण का सुख, पृ.क्र. ११२
१८. मालती जोशी - विश्वासगाथा, पृ.क्र. १०
१९. मालती जोशी - पाषाण युग, पृ.क्र. २८
२०. मालती जोशी - सहचारिणी, पृ.क्र. ३४
२१. वही - पृ.क्र. ३५
२२. मालती जोशी - पाषाण युग, पृ.क्र. ९४
२३. मालती जोशी - समर्पण का सुख, पृ.क्र. ८४
२४. वही - पृ.क्र. ९७
२५. वही - पृ.क्र. ९६